जैन कवियों के ब्रजभाषा-प्रबंध-काव्य

□ डॉ० लालचन्द जैन
हिन्दी विभाग, वनस्थली विद्यापीठ, वनस्थली (राज०)

भारतीय वाङ्मय के विकास में जैन कवियों का योगदान अविस्मरणीय है। जिस प्रकार भारतीय धर्मों में जैन धर्म एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है, उसी प्रकार भारतीय साहित्य में जैन साहित्य का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इसमें सन्देह नहीं कि जैन धर्म एक प्राचीन धर्म है और इस धर्म के बहुत से कर्णधार साहित्य के प्रणेता भी रहे हैं तथा अनेक साहित्यकार अपनी धार्मिक आस्थाओं को लेकर चले हैं। इस प्रकार जैन साहित्यकार अतीतकाल से ही अपनी मनीषा एवं भावुकता का परिचय देते रहे हैं।

कहने की आवश्यकता नहीं कि जैन साहित्यकार भारत की विविध भाषाओं और साहित्य की विविध विधाओं में साहित्य का सृजन करते रहे हैं। जिस प्रकार उन्होंने भारत की अनेक भाषाओं में साहित्य की रचना की, उसी प्रकार ब्रजभाषा में भी की। ब्रजभाषा में उनके द्वारा प्रभूत परिमाण में काव्य-सृष्टि हुई है। उसमें भी यद्यपि मुक्तक काव्य का प्राचुर्य है, किन्तु प्रबन्धकाव्यों की भी एक विशिष्ट भूमिका है। इन प्रबन्धकाव्यों के अन्तर्गत महाकाव्य और खण्डकाव्य के अतिरिक्त एकार्थ काव्य भी उल्लेखनीय हैं।

आलोच्य प्रबन्धकाव्यों में पार्श्वपुराण (भूधरदास), नेमीश्वरदास (नेमिचन्द्र) जैसे महाकाव्य, सीता चरित (राम चन्द्र बालक), श्रेणिक चरित (लक्ष्मीदास), यशोधरचरित (लक्ष्मीदास), यशोधरचरित चौपई (साह लोहट) जैसे एकार्थकाव्य, बंकचोर की कथा (नथमल), आदिनाथ बेलि (भट्टारक धर्मचन्द्र), रत्नपाल रासो (सूरचन्द), चेतनकर्म चरित (भैया भगवतीदास), मधु बिन्दुक चौपई (भैया भगवतीदास), नेमिनाथ मंगल (विनोदीलाल), नेमि राजमती बारहमासा सवैया (जिनहर्ष), नेमि-राजुल बारहमासा (विनोदीलाल), शत अष्टोत्तरी (भैया भगवतीदास), नेमि ब्याह (विनोदीलाल), पंचेन्द्रिय संवाद (भैया भगवतीदास) राजुल पच्चीसी (विनोदीलाल) सूआ बत्तीसी (भैया भगवतीदास), नेमिचन्द्रिका (आसकरण), शीलकथा (भारामल्ल), सप्तव्यसन चरित (भारामल्ल), निशिभोजन-त्याग कथा (भारामल्ल) नेमिचन्द्रिका (मनरंगलाल) आदि खण्डकाव्य ब्रज प्रबन्धकाव्य-शृंखला की महत्त्वपूर्ण कड़ियाँ हैं।

उपर्युक्त प्रबन्धकाव्यों के अतिरिक्त, पर्याप्त संख्या में, अनूदित प्रबन्धकाव्य भी उपलब्ध होते हैं, जैसे—धर्म-परीक्षा (मनोहरलाल), प्रीतंकर चरित (जोधराज गोदीका), पाण्डव पुराण (बुलाकीदास), धन्यकुमार चरित (खुशाल-चन्द्र), जीवंधर चरित (दौलतराम कासलीवाल), श्रेणिक चरित (रत्नचन्द), वरांगचरित (पाण्डे लालचन्द्र), जिनदत्त चरित (वख्तावरमल) आदि।

यदि हम अनूदित प्रबन्धकाव्यों को छोड़ दें तो भी यह कहना चाहिए कि मौलिक प्रबन्धकाव्य भी संख्या में कम नहीं हैं और उनमें नामकरण, विषय एवं शैली आदि की दृष्टि से विविधता परिलक्षित होती हैं। नामकरण की दृष्टि से ये रचनाएँ चरित, पुराण, कथा, वेलि, मंगल, चन्द्रिका, बारहमासा, संवाद, छन्द-संख्या आदि अनेक नामान्त हैं, जो अपने विविध रूपविधानों का संकेत करती है। विषय के विचार से भी ये रचनाएँ कई प्रकार की हैं। इनमें कुछ पौराणिक हैं, यथा—सीता चरित, श्रेणिक चरित, नेमीश्वर रास आदि, कुछ धार्मिक हैं, जैसे—बंकचोर की कथा,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शीलकथा आदि, कुछ की रचना दार्शनिक या आध्यात्मिक विषयों के आधार पर हुई है, जैसे—चेतन कर्म चरित, शत अष्टोत्तरी, पंचेन्द्रिय सवाद, मधु बिन्दुक चौपई, सूआ बत्तीसी आदि।

यह भी स्मरणीय है कि जिस काल में इन प्रबन्धकाव्यों का प्रणयन हुआ, वह काल हिन्दी में रीतिकाल के नाम से प्रसिद्ध है। इस युग में शृंगारपरक मुक्तक काव्य की सृष्टि अपने उत्कर्ष पर थी। बहुत थोड़े प्रबन्धकाव्यों का उदय अपने अस्तित्व की सूचना दे रहा था। ऐसे समय में वस्तु एवं शिल्प विषयक अनेक विशिष्टताओं से सम्पुटित अनेक प्रबन्धकर्ताओं की रचना एक आश्चर्य की बात है।

आलोच्य प्रबन्धकाव्यों में दो प्रमुख महाकाव्य है—

(१) पार्श्वपुराण और (२) नेमीश्वररास।

उक्त दोनों महाकाव्य के लक्षणों की कसौटी पर प्रायः पूरे उतरने वाले काव्य हैं। ये महान् नायक, महदुद्देश्य, श्रेष्ठ कथानक, वस्तु-व्यापार-वर्णन, रसाभिव्यंजना, उदात्त शैली आदि की दृष्टि से पर्याप्त सफल हैं।

एकार्थकाव्यों में कवि लक्ष्मीदास का यशोधर चरित एवं श्रेणिक चरित, अजयराज का नेमिनाथ चरित, रामचन्द्र बालक का सीताचरित आदि का महत्त्वपूर्ण स्थान है। ये काव्य चरित काव्यों की परम्परा के प्रतीत होते हैं, जिनमें प्रबन्धत्व के साथ-साथ कथाकाव्य एवं इतिवृत्तात्मक कथा के लक्षण भी विद्यमान हैं।

आलोच्य युग में रचे गये खण्डकाव्यों की संख्या ही सर्वाधिक है। जहाँ महाकाव्य और एकार्थकाव्य प्रायः पुराण, चरित, चौपाई और रास नामान्त हैं, वहाँ खण्डकाव्य कथा, चरित, चौपाई, मंगल, ब्याह, चन्द्रिका, वेलि, बारहमासा, संवाद तथा छन्द संख्या (शत अष्टोतरी, सूआ बत्तीसी, राजुल पच्चीसी) आदि अनेक नामान्त हैं। इन खण्ड-काव्यों के प्रतिपाद्य विषय अनेक हैं और उनमें प्रयुक्त शैलियाँ भी अनेक हैं। इन खण्डकाव्यों में भाव प्रधान खण्डकाव्यों की संख्या काफी है। ये अनुभूति की तीव्रता से सम्पुटित हैं, हमारे हृदय को छूते हैं और अधिक समय तक रसमग्न रखते हैं। इनमें प्रयुक्त अधिकांश छन्दों एवं ढालों का नाद-सौन्दर्य सहृदयों को विमोहित करता है। इस प्रकार के खण्डकाव्यों में आसकरण कृत नेमिचन्द्रिका, विनोदीलाल कृत राजुल-पच्चीसी, नेमि-ब्याह, नेमिनाथ मंगल, नेमि-राजुल बारहमासा संवाद, जिनहर्ष कृत नेमि-राजुल बारहमासा आदि उल्लेखनीय हैं।

कुछ ऐसे खण्डकाव्य भी हैं, जो वर्णनप्रधान या घटनाप्रधान हैं। बंकचोर की कथा (नथमल), वर्णनप्रधान तथा चेतनकर्मचरित (भैया भगवतीदास) घटनाप्रधान खण्डकाव्य कहे जा सकते हैं।

समन्वयात्मक खण्डकाव्यों में भारामल्ल कृत शील कथा, भैया भगवतीदास विरचित सूआ-बत्तीसी, मधुबिन्दुक चौपाई, एवं पचेन्द्रिय-संवाद सुन्दर बन पड़े हैं।

वस्तुतः खण्डकाव्य के क्षेत्र में भैया भगवतीदास एवं विनोदीलाल को अधिक प्रसिद्धि मिली है। भैया ने पांच खण्डकाव्यों (शत अष्टोत्तरी, चेतनकर्मचरित, मधु-बिन्दुक चौपाई, सूआ बत्तीसी और पंचेन्द्रिय संवाद) का प्रणयन किया है। इन पाँचों खण्डकाव्यों का कथापट झीना है, किन्तु काव्यात्मक एवं कलात्मक रंग गहरा है। साध्य एवं साधन दोनों दृष्टियों से भगवतीदास के खण्डकाव्य और कामायनी (प्रसाद) एक ही परम्परा के काव्य हैं। अन्तर मात्र इतना ही है कि भगवतीदास की कृतियाँ सीमित लक्ष्य के कारण खण्डकाव्य हुईं, वहाँ प्रसाद की कृति उद्देश्य की महत्ता के कारण महाकाव्य हो गयी। भगवतीदास महाकाव्य की रचना न करने पर भी महाकवि के गौरवभागी हैं।[1]

भैया कवि के अतिरिक्त विनोदीलाल के खण्डकाव्य भी भाव, भाषा एवं शैली की दृष्टि से उत्कृष्ट कोटि के हैं।

आलोच्य प्रबन्धकाव्यों की रचना का उद्देश्य भी विचारणीय है। ध्यान रखने की बात यह है कि वह काल

---

१. डॉ० सियाराम तिवारी : हिन्दी के मध्यकालीन खण्डकाव्य, पृ० ३६५.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मुख्यत: रीति, शृंगार और कला का काल था। उस युग के काव्य में विलासिता एवं ऐहिक सुख-भोग की प्रवृत्ति बढ़ चली थी, किन्तु हमारे काव्यों में भिन्न प्रवृत्ति–निवृत्तिमूलकता का ही अतिरेक दिखाई देता है। इस की दृष्टि से इनमें शान्त रस शीर्ष पर है। जैन कवि बनारसीदास (वि०सं० १६४३-१७००) ने 'नवमो शान्त रसन कौ नायक' कहकर शान्त को रसों का नायक स्वीकार किया था। अन्य पूर्ववर्ती कवियों की चेतना ने भी शान्त रस की धारा में खूब अवगाहन किया है। वास्तव में हमारे युग के कवि भी आध्यात्मिक धारा के पोषक थे और शृंगार के अन्तर्गत मांसल प्रेम के विरोधी। उनकी रचना में शृंगार की लहरें शान्त के प्रवाह में विलीन हो गई हैं। रस की यह परिणति रीति के झकोरों से मुक्त एक विशेष दशा की सूचक है।

इन प्रबन्धकाव्यों में भक्ति का, धर्म एवं दर्शन का स्वर भी प्रबल है और उनमें स्थल-स्थल पर उनके प्रणेताओं की सन्त-प्रवृत्ति का उन्मेष झलकता है। कहना न होगा कि इन कृतियों में या तो तिरसठशलाका पुरुषों का यशोगान है या आत्मतत्त्व की उपलब्धि के लिए रूपक अथवा प्रतीक शैली में दार्शनिक एवं आध्यात्मिक रहस्यों का उद्‌घाटन है, या अन्यान्य चरित्रों के परिप्रेक्ष्य में उदात्त मूल्यों एवं आदर्शों की प्रतिष्ठा है।

वस्तुत: लक्ष्य के विचार से इन काव्यों की वैराग्योन्मुख प्रवृत्ति का मूल उद्देश्य तत्कालीन अव्यवस्था से क्षत-विक्षत सामन्तवाद के भग्नावशेष पर खड़े त्रस्त और पीड़ित मानव को स्फूर्ति और उत्साह प्रदान करके दिशान्तर में प्रेरित करता है, जीवन-पथ में आच्छादित अन्धकार और निराशा को दूर कर उसमें आशा और आलोक भरना तथा विलास-जर्जर मानव में नैतिक बल का संचार करना है।[1] इनमें स्थल-स्थल पर जो भक्ति की अनवरत गंगा बह रही है, वह भी इस भावना के साथ कि मानव अपने पापों का प्रक्षालन कर ले, अपनी आत्मा के कालुष्य को धो डाले और इनमें जो आदर्श चरित्रों का उत्कर्ष दिखलाया गया है, वह भी इसलिए कि उन जैसे गुणों को हृदय में उतार ले।

इस प्रकार विवेच्य प्रबन्धकाव्यों में धर्म के दोनों पक्षों (आचार एवं विचार) पर प्रकाश डालते हुए मानव को यह बोध कराया गया है कि व्यक्ति और समाज का मंगल धर्मादर्शों के परिपालन एवं चारित्रिक पवित्रता के आधार पर ही संभव है।

प्राय: समस्त प्रबन्धों में संघर्षात्मक परिस्थितियों का नियोजन तथा अन्त में आत्म-स्वातन्त्र्य की पुकार है। उनके मध्य में स्थल-स्थल पर अनेक लोकादर्शों की प्रतिष्ठा है। लोक-मंगल की भावना उनमें स्थल-स्थल पर उभरी है। वहाँ पाप पर पुण्य, अधर्म पर धर्म और असत्य पर सत्य की विजय का उद्‌घोष है। उनमें ऐसे प्रसंग आये हैं जहाँ हिंसा, क्रोध, वैर, विषयासक्ति, परिग्रह, लोभ, कुशील, दुराचार आदि में लिप्त मानव को एक या अनेक पर्यायों में घोरतम कष्ट सहते हुए बतलाया गया है और अन्ततः अहिंसा, अक्रोध, क्षमा, त्याग, उदारता, अपरिग्रह, शील, संयम, चारित्र आदि की श्रेयता, पवित्रता और महत्ता सिद्ध कर इहलोक और परलोक के साफल्य का उद्‌घाटन किया गया है। उनका लक्ष्य राग नहीं विराग है, भौतिक प्रेम नहीं आध्यात्मिक प्रेम है, भोग नहीं योग है, तप है, मोक्ष है। संक्षेप में, चतुर्वर्ग फलों में से धर्म और मोक्ष की प्राप्ति है, अर्थ और काम उपर्युक्त दोनों फलों की उपलब्धि के साधन मात्र हैं।

निष्कर्ष यह है कि विद्वानों द्वारा आलोच्य प्रबन्ध-काव्यों का प्रबन्धकाव्य-परम्परा में चाहे जो स्थान निर्धारित किया जाये, किन्तु इतना अवश्य है कि उनमें चिन्तन की, आचारगत पवित्रता की, सामाजिक मंगल एवं आत्मोत्थान की व्यापक भूमिका समाविष्ट है। सामाजिक, धार्मिक एवं साहित्यिक तीनों ही दृष्टियों से इन काव्यों का अविस्मरणीय महत्त्व है।

□

---

१. देखिए—डॉ० नेमिचन्द्र शास्त्री : हिन्दी जैन साहित्य परिशीलन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org